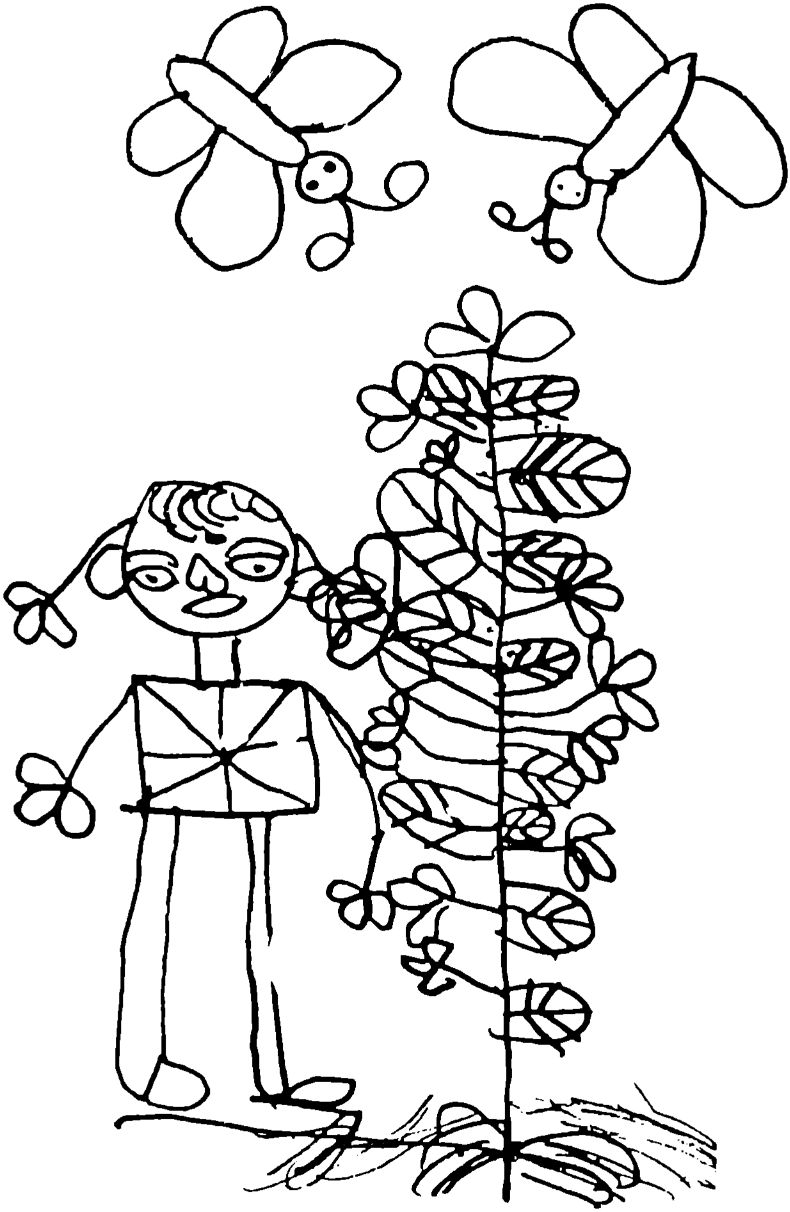
आज़ादी की नुक्ती



बच्चों द्वारा लिखी गई कहानियों का संकलन



कीर्ति चौहान

कीर्ति चौहान, पाँच वर्ष, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.। चकमक मई, 1990 में प्रकाशित।

आज़ादी की नुक्ती

चकमक (जनवरी, 1989 से दिसम्बर, 1991) में प्रकाशित,
बच्चों की कहानियों का संकलन

एकलव्य

का प्रकाशन

आज़ादी की नुक्ती
चकमक में प्रकाशित बच्चों द्वारा लिखी कहानियों का संकलन

प्रथम संस्करण : फ़रवरी, 1997

मूल्य रु. 12.00 (बारह रुपए)

एकलव्य
ई- 1/25, अरेरा कालोनी
भोपाल-4620-16
म.प्र.

आवरण : समर युसुफ, नौ वर्ष, भोपाल, म.प्र.।
पिछला आवरण : हार्दिक, पहली, भावनगर, गुजरात।

राजकमल आफसेट प्रिन्टर्स, भोपाल द्वारा मुद्रित **3000**

आपस की बात

चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

'आज़ादी की नुक्ती ' चकमक में प्रकाशित बच्चों द्वारा लिखी गई कहानियों का दूसरा संकलन है। पहला संकलन *'लोमड़ी और ज़मीन'* 1989 में प्रकाशित हुआ था। इसमें चकमक के प्रवेशांक जुलाई, 85 से दिसम्बर, 88 तक के अंकों से चुनी हुई कहानियाँ ली गई थीं। 'आज़ादी की नुक्ती' में इसके आगे यानी जनवरी 90, से दिसम्बर, 91 तक के अंकों से चुनी रचनाएँ ली गई हैं।

तीन कहानियाँ ऐसी हैं, जो पहले स्थानीय पत्रिकाओं बालचिरैया (पिपरिया) तथा बालकमल (देवास) में प्रकाशित हुईं और फिर चकमक में।

कुछ कहानियों के साथ वही चित्र लिए गए हैं जो चकमक में उनके साथ छपे थे या उसी अवधि के किसी अन्य अंक में। कुछ कहानियों के साथ नए चित्र छापे जा रहे हैं। मुख्य आवरण तथा पिछले आवरण पर भी नए चित्र प्रकाशित हो रहे हैं।

प्रत्येक रचनाकार व चित्रकार के नाम के साथ उसकी उम्र या कक्षा का उल्लेख है। यह उम्र या कक्षा रचना लिखते समय या चित्र बनाते समय की है।

कहानियों का चयन करते समय हमारी यह कोशिश रही है कि संकलन में शामिल रचनाएँ बच्चों की अपनी मौलिक अभिव्यक्ति प्रकट करने वाली ही हों।

❑ एकलव्य समूह

फ़रवरी, 1997

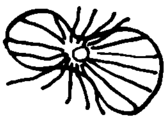
कौन-सी कहानी कहाँ!

साइकिल चलाई

❑ कृष्ण सिंह

एक दिन मेरे घर पर एक मेहमान आया। वह साथ में साइकिल भी लाया था। मैंने साइकिल देखी तो खुशी से झूम उठा। बाहर गया, साइकिल उठाई और थोड़ी दूर पैदल गया। वहाँ मुझे मेरे दोस्त मिले। उन्होंने कहा, "हम साइकिल पर बैठें?"

मैंने हाँ तो कर दी लेकिन मैं किसी सवारी को बैठाकर नहीं चला सकता था। एक को पीछे बैठाया, एक को आगे फिर मैं स्वयं बैठ गया और साइकिल चलाने लगा। रास्ता थोड़ा ढलान वाला था। साइकिल ज़ोर से चलने लगी। हमें बहुत मज़ा आ रहा था, तभी साइकिल का संतुलन बिगड़ गया। साइकिल का अगला पहिया एकदम पीछे घूम गया। वह पहिया अब इस



आकृति में बदल गया था। हम एक झटके से आगे जा गिरे।

हाथ पैरों में चोट आई सो तो अलग लेकिन मेरा तो सिर भी फूट गया। किसी तरह ख़ून रोका और वे दोनों मित्र पहिए को ठीक करने में लग गए। बड़े पत्थर से ठोककर उन्होंने थोड़ा-थोड़ा सीधा कर लिया था परन्तु कुछ तो बेंड रह ही गया था।

आख़िर हिम्मत कर साइकिल घर ले जाकर उसी जगह रख दी और हम सब छिप गए एक खण्डहर में। थोड़ी देर बाद मेहमान बाहर आया, साइकिल लेकर चला गया। लेकिन यह क्या, वह गुस्से में वापस आया और मेरे पिताजी से कहा

कि उसकी साइकिल का एक पहिया बेंड हो गया है। हुआ यूँ कि वह कुछ दूरी पर गया और साइकिल पर बैठा तो पहिया इधर-उधर घूमने लगा।

पिताजी को जब यह पता चला कि यह हरकत हमने की है तब उन्होंने हमें ढूँढा और उस खण्डहर में पा लिया। मेरी हालत देखी तो मुझे तुरन्त अस्पताल ले गए। दस-पन्द्रह दिन बाद मैं ठीक हो गया। तब मैंने सारी घटना सुना दी। पिताजी ने मुझे साइकिल का इतना शौकीन देखा तो एक छोटी साइकिल ख़रीद दी और उसे चलाना सिखा दिया। ●



सुरेशराम

कृष्ण सिंह, बारह वर्ष, बरार, उदयपुर, राजस्थान। चकमक अप्रैल, 1991 में प्रकाशित। सुरेश राम, आठवीं, बर्रीकला, म.प्र.।

हमने गुड़ खाओ

❑ मनमोहन तिलन्थे

एक दिन मैं उर (और) मेरो बड़ो भैया घर में थे। मेरी बाई घर में नईं थी। उर मेरे दाऊ बी (भी) घर में नई थे। वे खेत में काम रहे थे। दाऊ बखर हाँक रहे थे। उर बाई फर्रे बीन रईं थीं।

मेरो बड़ो भैया बोलो, "यार मनमोहन अपने घर की कुटिया में गुड़ धरो है। तू कोई से नै कहे तो अपन दोई खालेएं।"

मैने बी कई, "खालो भैया मनो मोहे भी मुतको दैयो।"

तई उन्ने कई, "हओ।"

हमने गुड़ निकारो उर खान लगे। अब उते से बाई आ रईं थीं। मैंने दूरई से देख लई।

मैंने भैया से कई, "ये देख तो भैया मोसे जो गुड़ तो खुवा नई रयो। जाहे तुमई खालो।"

तई बे बोले, "हओ।"

उर मैं गुड़ उनकी थरिया में धर के बाहर आ गयो। बड़े भैया ने तो बाई हे देखी नई थी। वे तो निरभय होके खा रए थे जैसेई बाई घर आईं मैंने कह दई, "ओ बाई बड़ो भैया घर में गुड़ खा रयो है।"

बाई बोली, "कहाँ है बो?"

तई मैंने कही, "वो तो देख लो घर में घुसो-घुसो खा रयो है।"



चेतन राँका

जैसेई बाई घर में गईं मैंने बड़े भैया के डर से कक्कू के घर की गैल धर लई। बाई ने बड़े भैया हे खूब गारी दईं।

वे बोलीं, "नासमिटे कच्छू नई बचन देवे। अबें गुड़-मुड़ बढ़ा गयो तो ओर कहाँ से लाहें। अब बजार है पूरे चार दिना बाद। चाय-माय काय की बन है। शक्कर बी तो कंटरोल में नईं मिली। काय रे तू रोटी नई खा सकत थो?"

अब भैया की मुइयाँ उतर गई वे फुसफुसाके बोले, "मैंने अकेले ने थोरू खाओ है बाने बी तो खाओ है।"

तईं बाई बोली, "काय रे तू तो बड़ो है। जब तूने खाओ हुहै तब वो तो खै है।"

तब तक तो मैं धीरे-धीरे कक्कू के आँगन से बहार होके सब सुन रयो थो फिर मैं बोलो, "ए बाई सुनो अब तुमई देखो मैंने खाओ होतो तो मैं तुमसे कह देतो।"

तई बाई बोली, "हाँ रे तू का कम है।"

मैंने मन में सोची मेरी सफाई काम नै आई उर मैं फिर कक्कू के घर चलो गयो।

कक्कूहुन को उर हमारो घर जोरे जोरे (पास-पास) तो थे ही। वे हमरी पूरी बातें सुन रए थे। उन्ने मोहे बुलाओ उर बोले, "यार मनमोहन हमें एक चरू पानी तो लान दो।"

मैं सहज भोरे चरू में पानी लेके पोंच गयो तब वे बैलों की सार में खटिया पे बैठे बैठे तमाखू बना रए थे। उन्ने चरू के संग में मेरो हाथ बी पकड़ लयो, उर मुस्काए के बोले, "तूने बी गुड़ खाओ थो सच्ची बता।" तई मैं हिनहिना के बोलो, "कक्कू जी मैंने तो तन्नक सो खाओ है।"

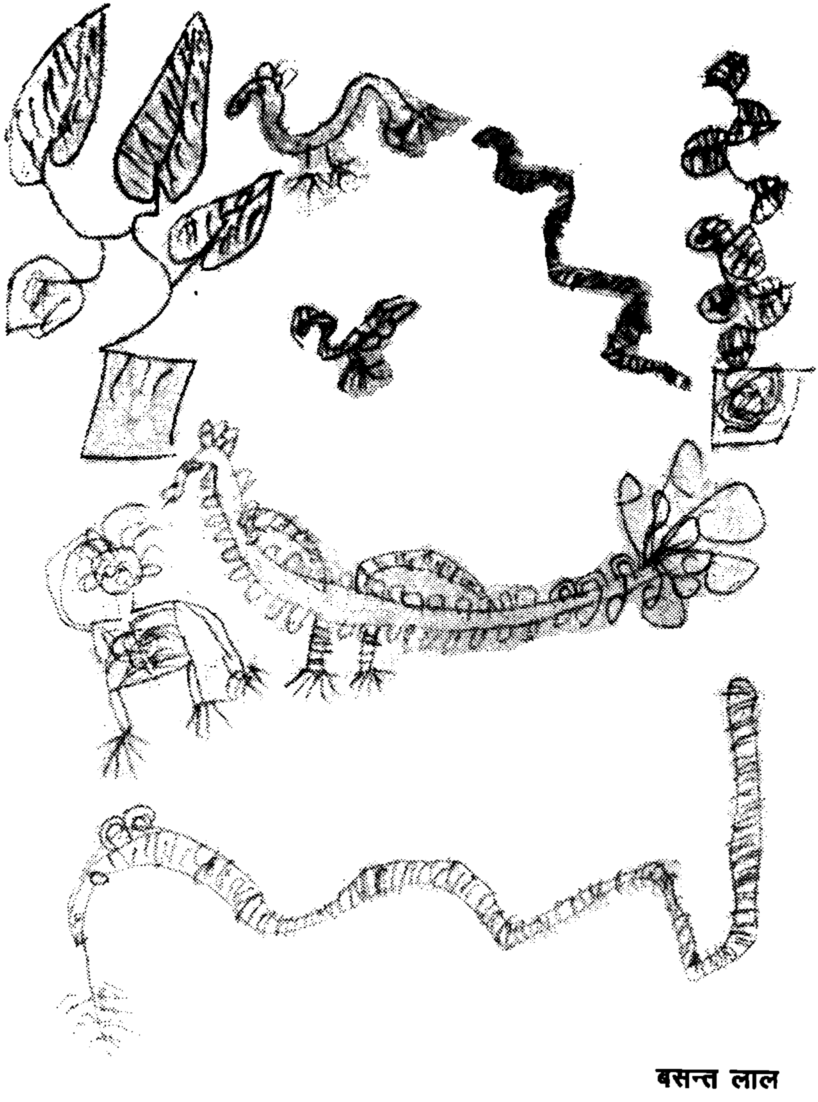
वे बोले, "खइए रामधई।"

तई मैंने बी बचबे के मारे रामधई (रामकमस) खा लई।

वे बोले, "तूने तन्नक सो खाओ होय चाय मुतको सो, खाओ तो है। तू तो बच गयो उर बो उते गारी खा रयो है।"

इत्ती बात केत हुए उन्ने मेरे गाल में एक थप्पड़ मारो। तो हमने गुड़ भी खाओ और थप्पड़ बी। ●

मनमोहन तिलन्थे, दसवीं, तवानगर, होशंगाबाद, म.प्र.। चकमक फ़रवरी, 1991 में प्रकाशित। चेतन राँका, बारह वर्ष, बदनावर, म.प्र.।



बसन्त लाल

साँप ने सोचा

❑ अशोक हुसैन

एक दिन एक साँप इधर-उधर घूमने निकला। साँप के सामने से एक लड़की आ रही थी। साँप ने सोचा मेरे पास ज़हर है लेकिन इस लड़की को काटूँ या नहीं! फिर साँप ने सोचा यह लड़की मेरी तरफ आ रही है तब तो आख़िर इसको काटना ही पड़ेगा।

लेकिन एक बात है जब इसको मैं काटूँगा। तो यह चिल्ला पड़ेगी। चिल्लाने की आवाज़ सुनकर लोग दौड़कर आ जाएँगे और मेरी जमकर सुताई कर देंगे। इससे अच्छा मुझे ही इस रास्ते को छोड़कर खिसक लेना चाहिए। और साँप दूसरा रास्ता पकड़कर चलता बना। ●

अशोक हुसैन, तीसरी, मानकुंड, देवास, म.प्र.। बालकलम (देवास) तथा चकमक सितम्बर, 1989 में प्रकाशित। बसन्त लाल, चौथी, फोफल्या, शाहपुर, बैतूल, म.प्र.।



नीरज बड़गैयाँ

बीच की माँग

❑ **विप्लव उपाध्याय**

एक बार जब मैं स्कूल गया तो मैंने देखा कि मेरे कुछ दोस्त बीच की माँग निकालकर आए थे। वे बहुत ही सुन्दर लग रहे थे। मैंने भी बीच की माँग निकालना शुरू कर दी। कुछ दिनों बाद यह बात मेरे पापा को मालूम हुई, तो उन्होंने मुझे समझाया कि, बेटा बीच की माँग तो आवारा लड़के निकालते हैं। पर मैंने फिर बीच की माँग निकालना शुरू कर दी। मुझे पापा ने ख़ूब समझाया, पर मैं नहीं माना। अन्त में पापा ने मेरी गंजी ही करवा दी। ●

विप्लव उपाध्याय, सातवीं, देवास, म.प्र.। चकमक जनवरी, 1991 में प्रकाशित।
नीरज बड़गैयाँ, नवमीं, पथरिया, दमोह, म.प्र.।

आज़ादी की नुक्ती

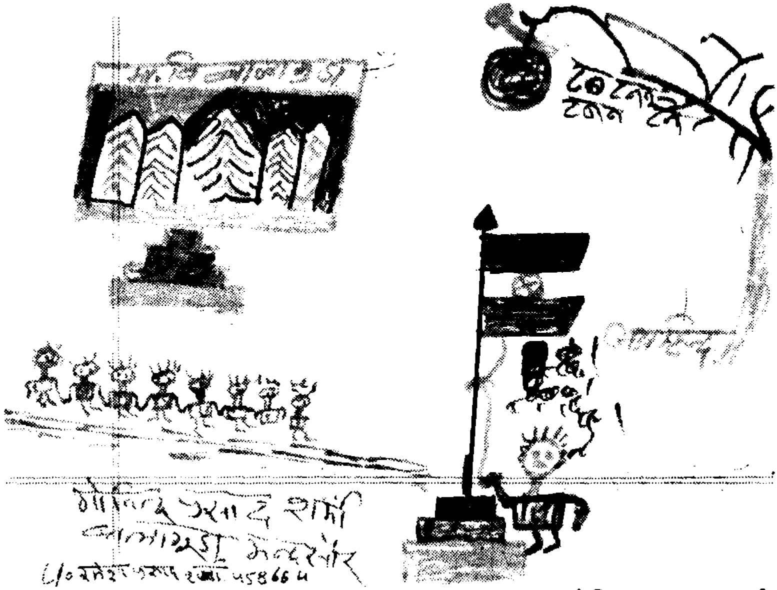
❑ **राजनारायण दुबे**

15 अगस्त के कारण हमने एक दिन पहले से कपड़े धो रखे थे। 15 अगस्त के दिन हमने सबेरे 5 बजे उठकर मुँह-हाथ धोए और नहाया। फिर हमने चाय पी और उसके बाद हम ड्रेस पहनकर, जूते-मौज़े पहनकर बढ़िया तैयार होकर स्कूल गए।

वहाँ हम थोड़े घूमे-फिरे और फूटे खाए। इतने में सर आ गए और कहने लगे चलो लाइन में लगो। हम लाइन में लग गए। एक मोड़ा हमरी लाइन में लगो। हमने बाके दो चार करारे हाथ जमाए। इत्ते में बो मासाब के पास पहुँच गओ। मासाब से बा ने कही कि मासाब मोहे एक मोड़ा ने मार दओ तब मासाब मेरे पीछे दौड़े तई हमने भग दओ और सिंधी कालोनी की गलियों में घूमत रहे और बुद्धा के खेत में से हीट के गल्ले बाज़ार पहुँचे। भा पे भाषण भये। भाषण सुन-सुन के हमरो दिमाग पच गओ। भाषण खतम भये हम सब स्कूल आए। हम लाइन में लगे नुक्ती बँट रही थी।

फिर बोई मोड़ा मिल गओ। बो फिर हमसे उलझन लगो। हमने बाके इत्तो मारो इत्तो मारो कि बाहे बेहोश कर दओ। हमें एक पुड़िया नुक्ती मिली। उत्तीसी नुक्ती के पीछे हम दिन भर परेशान रहे और नुक्ती खात-खात घर आ गए। ●

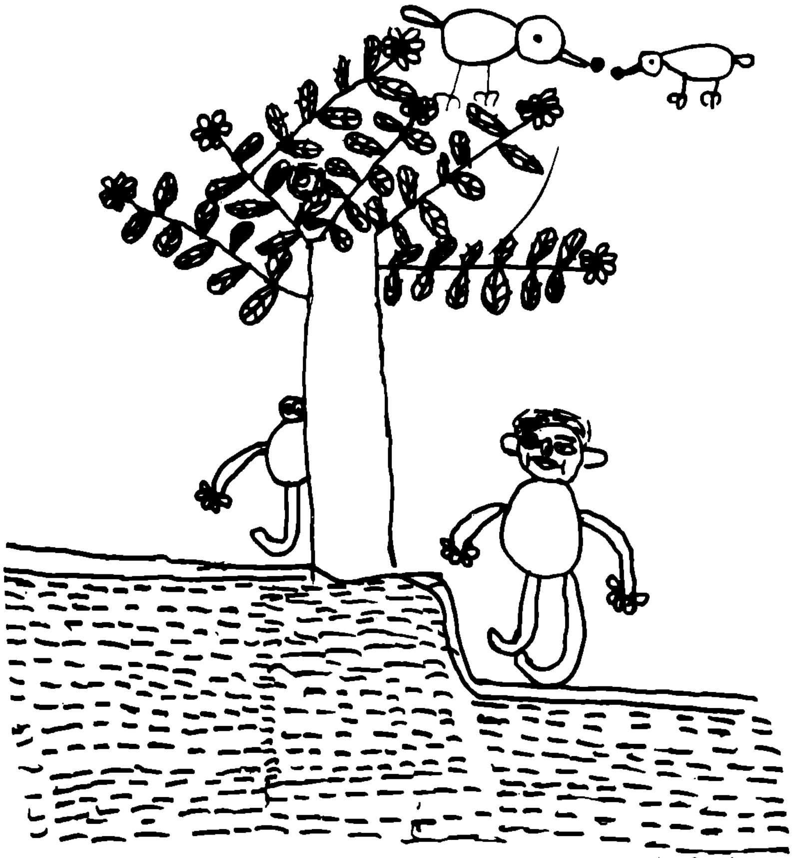
राजनारायण दुबे, पिपरिया, होशंगाबाद, म.प्र.। बालचिरैया (पिपरिया) तथा चकमक फ़रवरी, 1990 में प्रकाशित। गोविन्द प्रसाद शर्मा, बालागुड़ा, मन्दसौर, म.प्र.।



गोविन्द प्रसाद शर्मा

अगर गुरुजी न मारते!

❑ विनोद परमार



आरती चौहान

जब मैं कक्षा पाँचवीं में पढ़ता था और छोटा भाई चौथी में था। हम दोनों साथ-साथ स्कूल जाते थे।

स्कूल और हमारे घर के रास्ते में एक इमली का पेड़ था। लड़के उस पर चढ़कर इमलियाँ तोड़कर खाया करते थे।

हमारे विद्यालय में हर शनिवार बालसभा का आयोजन होता था। बालसभा में सभी छात्र-छात्राओं का बोलना आवश्यक होता था। उस रोज़ हमें याद नहीं था और बालसभा बैठ गई थी। गुरुजी का आना बाक़ी था। तभी मैंने और मेरे भाई ने प्लान बनाया कि अगर आज कुछ कविता या भाषण अपन ने नहीं बोला तो गुरुजी की मार खानी पड़ेगी। बस यह सोचकर हम दोनों भाई और कुछ दोस्त बालसभा से उठकर भाग गए।

हम लोग इमली के पेड़ के नीचे जमा हो गए। सबसे पहले मैं चढ़ा, फिर छोटा भाई फिर सभी दोस्त प्यारी-प्यारी, खट्टी-मिट्ठी इमली खाने को चढ़ गए।

थोड़ी इमली खाई और फिर एक डाल पर से दूसरी डाल पर कूदने लगे। अचानक मेरा पैर फिसल गया। मैं घबराने लगा और घबराहट में मेरे हाथ भी छूट गए। मैं डालियों में से अकटता हुआ जमीन पर जा गिरा। मेरे हाथ-पैर टूट गए। मेरे सभी दोस्त वहाँ से उतरकर रफूचक्कर हो गए। मैं रोता-चिल्लाता वहीं पड़ा रहा।

दोस्तों ने घर की बजाए स्कूल जाकर कक्षाध्यापक को बताया। अध्यापक जी मुझे उठाकर तुरन्त अस्पताल ले गए। और मैं दो माह बाद ठीक हो पाया।

अगर गुरुजी न मारते तो न भागते न गिरते। ●

विनोद परमार, दसवीं, रामा, झाबुआ, म.प्र.। आरती चौहान, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.। कहानी एवं चित्र चकमक अक्टूबर, 1990 में प्रकाशित।

रंगीन चिड़ी

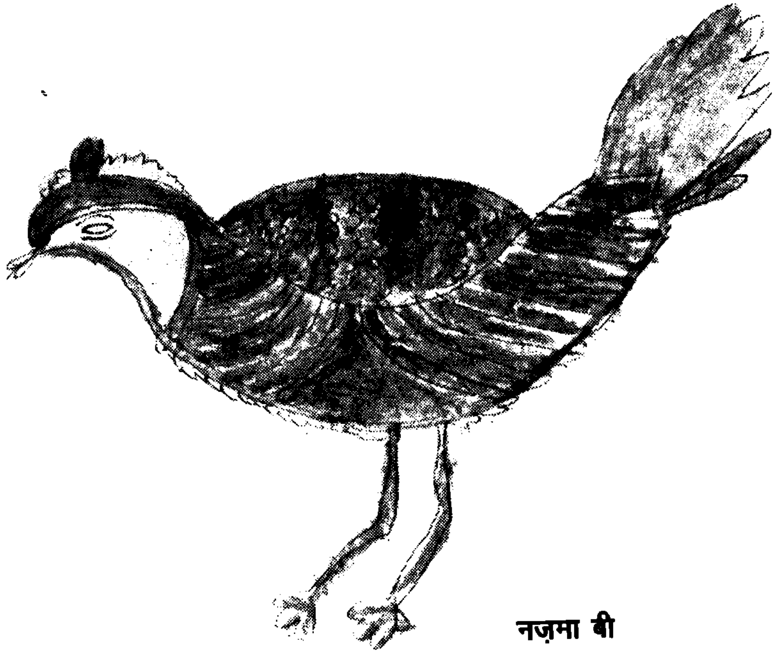
❑ **धन्नालाल बैरवा**

हमारे घर के पिछवाड़े में एक पीपल का पेड़ है। मैं उसकी छाया में बैठा पढ़ रहा था। अचानक एक चिड़ी ने मेरे ऊपर बीट कर दी। मेरे को बहुत क्रोध आया, लेकिन करता क्या? अचानक एक बात मेरे दिमाग़ में आई। एक पराती लेकर उसे एक लकड़ी की सहायता से खड़ा किया। लकड़ी को एक रस्सी से बाँध दिया। पराती के नीचे और आस-पास चुग्गा डाल दिया। रस्सी को पकड़कर पेड़ की ओट में छिप गया।

बहुत से पक्षी वहाँ चुग्गा चुगने आ गए। एक चिड़ी पराती की छाया में पराती के नीचे चुग्गा चुगने लगी। मैंने रस्सी को खींचा। चिड़ी पराती के नीचे दब गई। चिड़ी को पकड़कर उसे अनेक रंगों से रंगकर और एक काग़ज़ में अपना पता लिखकर चिड़ी के गले में बाँध दिया।

कागज़ तो टूटकर गिर गया, लेकिन वह चिड़ी अब भी हमारे घर के आसपास ही रहती है। वह चिड़ियों के बीच में बैठी हुई ऐसी लगती है मानो सब पर हुक्म चला रही हो। सब उसे रंगीन चिड़ी कहते हैं। ●

धन्नालाल बैरवा, मंडोर, जयपुर, राजस्थान। चकमक जुलाई, 1991 में प्रकाशित।
नज़मा बी, हिरणखेड़ा, होशंगाबाद, म.प्र.।



नज़मा बी

झूठी-मूठी

❑ गजेन्द्र सिंह ठाकुर

एक दिन की बात है भैया होरे पानी गिर रओ थो। मैंने सोची आज तो इत्तो पानी गिर रओ है। आज की छुट्टी हुहै।

तई मैंने मेरे कक्का से पूछी। कक्का ने मोहे डाँट दओ मैं रोने लगो। मोसे फिर स्कूल जात नहीं बनो।

गैल में मैंने सोची आज स्कूल नहीं जाऊँ मेरे दोस्त है बस्ता दे दओ। और मैं कीचड़ में सो गओ। मेरे दोस्त ने समझी जाहे चक्कर आ गओ। वो दौड़ते मेरे घर गओ मैं उठके आनंद हुनों के घर भग गओ। मेरी बाई उनके घरे आ गई। और मोहे बहुत मारो। मैंने घर तन दौड़ लगा दई। ●

गजेन्द्र सिंह ठाकुर, चौथी, पिपरिया, होशंगाबाद, म.प्र.। बाल चिरैया (पिपरिया) तथा चकमक जुलाई, 1990 में प्रकाशित। लोकमणि शर्मा, छठवीं, सोहागपुर, होशंगाबाद, म.प्र.।



लोकमणि शर्मा

खेल खेल में

❑ **देवकरण पाटीदार**

स्कूल लगने में देर थी। सब खेल रहे थे। मैं भी खेल खेलने के लिए गया तो मुझे कोई नहीं खिला रहा था। मुझे बहुत दुख हुआ। मैं एक जगह बैठकर सोच रहा था कि स्कूल क्यों नहीं लग रहा है। थोड़ी देर में स्कूल लग गया। मैं सोचता ही रह गया। थोड़ी देर बाद मेरे टीचर ने देखा तो मुझे डाँटा और मुझे कमरे में ले गए। थोड़ी देर में टन-टन-टन की आवाज़ सुनाई दी। सब बच्चे अपने-अपने घर चले गए। मैं यहीं रह गया। फिर टीचर ने कहा, 'तुम इतने उदास क्यों हो?'

मैंने डरते-डरते कहा, 'मुझे कोई नहीं खिलाता है।'

टीचर ने पूछा, 'तुम्हें क्यों नहीं खिलाते हैं?'

'मुझे मालूम नहीं।'

'ठीक है, तुम घर जाओ।'

मैं घर आ गया। मेरा मन किसी भी काम में नहीं लग रहा था। तो मम्मी ने पूछा, 'तुम इतने उदास क्यों हो?'

मैंने कहा, 'मम्मी, मुझे कोई नहीं खिलाता है।'

मम्मी ने कहा, 'इसमें उदास होने की क्या बात है? मैं सब बच्चों से कह दूँगी कि मेरे बच्चे को भी खेल खिलाया करो।'

दूसरे दिन मैं स्कूल गया तो मेरे दोस्त मुझे पकड़कर खेल के मैदान में ले गए। मैं भी खेलने लगा। उस दिन मुझे बहुत खुशी हुई। ●



मुखविन्दर सिंह कौर

देवकरण पाटीदार, नेवरी, देवास, म.प्र.। मुखविन्दर सिंह कौर, हरदा, म.प्र.।
कहानी तथा चित्र चकमक अक्टूबर, 1991 में प्रकाशित।

सुनील का सपना

❑ **देव प्रसाद यादव**

किसी गाँव में सुनील नाम का लड़का रहता था। वह हर रात को सपना देखा करता था। एक रात उसने सपना देखा कि वह एक तालाब में नहाने गया है। पानी में घुसा कि एक मगरमच्छ ने उसके पैर को पकड़कर खींच लिया। उसने निगलने के लिए मुँह खोला कि सुनील का पैर छूट गया।

सुनील तालाब से निकलकर जल्दी-जल्दी कपड़े पहनकर वहाँ से भागा। भागते-भागते अपने गाँव के मैदान में पहुँचा। उस मैदान में एक सर्प था। सर्प को देखकर फिर जंगल की तरफ भागने लगा। उसी जंगल में सिंह था। सिंह बहुत दिन से भूखा था। उसने देखा कि लड़का भागा जा रहा है। सुनील ने देखा कि सिंह मुझे खाने को आ रहा है। फिर वहाँ से भागा। भागते-भागते एक गौशाला पहुँचा। गौशाला में सभी गायें चरने के लिए चली गईं। पर एक गाय वहाँ खड़ी थी। सुनील गाय के पास पहुँचा और प्रार्थना की, "हे माता मेरे प्राण बचा लो।"

गाय ने सुनील की प्रार्थना स्वीकार कर ली। गाय ने सुनील से कहा, "मैं मेंढक बन जाती हूँ और तुम पेड़ पर चढ़ जाओ। जब सिंह मुझे मारेगा तो तुम हँस देना।"

कुछ देर बाद सिंह वहाँ आया और मेंढक को देखकर खाने के लिए लपका। क्योंकि वह बहुत दिनों से भूखा था। उसने जैसे ही पंजा उठाया कि सुनील हँस पड़ा। सिंह को शरम आ गई, वह लज्जित होकर भाग गया। सुनील पेड़ से उतरा और गाय, मेंढक से फिर गाय बन गई। ●



नीलम कुमारी

देवप्रसाद यादव, सातवीं, करही बाज़ार, रायपुर, म.प्र.। चकमक फ़रवरी, 1990 में प्रकाशित। नीलम कुमारी, गोपालपुर, मुंगेर, बिहार।

रूमाल ने करवाया झगड़ा

❑ अशोक कुमार

मेरे स्कूल में रफ़ीक नाम का एक लड़का पढ़ता है। वह मुझसे बहुत मार-पीट करता है। एक दिन मैं स्कूल में रूमाल ले गया। स्कूल की आधी छुट्टी हुई। सब लड़के खेल रहे थे। रफ़ीक ने मुझसे मेरा रूमाल माँगा। थोड़ी देर बाद मैंने उससे अपना रूमाल माँगा तो उसने देने से इंकार कर दिया।

मैंने उससे कहा, देख सीधे से दे दे वरना मैं मेरे दोस्तों को बुला लाऊँगा तो वे तेरी पीठ सही कर देंगे।

उसने मुझसे कहा, मैं काला नाग हूँ, काला नाग। सामने आ जाए तो मैं अपने बाप को भी डस लूँ फिर तुम क्या चीज़ हो।

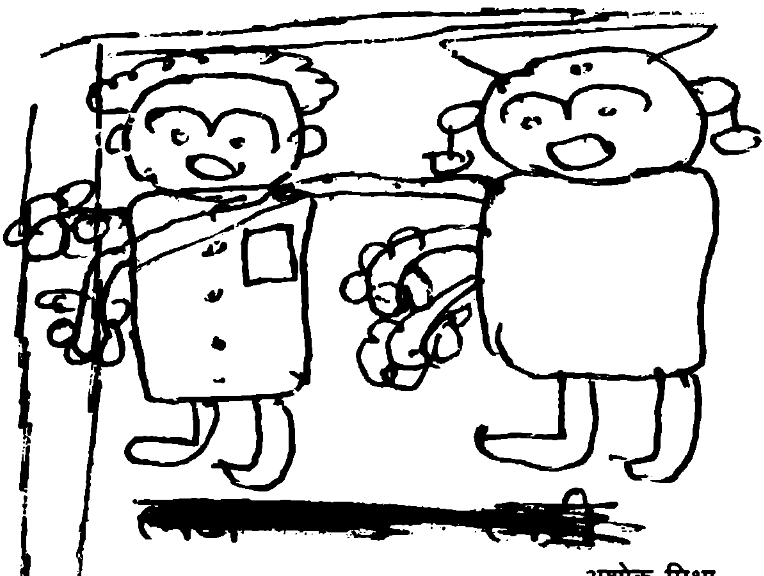
मैं अपने सब दोस्तों को बुला लाया वह भागा। मेरे सब दोस्त उसके पीछे दौड़े। काफ़ी दौड़ने के बाद पकड़ में आ गया। मैंने उससे कहा, तू काला नाग है तो ले तेरा बाप सामने खड़ा है, ले डस। उसने मुझको दो छड़ी जमा दी। मेरे दोस्तों ने उसे पकड़ लिया और रूमाल छुड़ा लिया।

उसने मुझसे कहा, कल सबको मज़ा चखा दूँगा। दूसरे दिन वह अपने भाई को बुला लाया। हमने उसके भाई को पूरी बात समझा दी। उसने मुझसे तथा मेरे दोस्तों से कहा कि तुम एक क्लास में पढ़ते हो, अब ऐसा मज़ाक मत करो। मैं तथा मेरे दोस्त अपने घर आ गए।

दूसरे दिन वह मेरे दोस्तों से फिर बोलने लगा और कहा कि मैं अशोक को कभी न कभी ज़रूर मारूँगा। लेकिन उसने

मुझे अभी तक नहीं मारा है।

यह कहानी अभी ख़त्म नहीं हुई है। रफ़ीक ने मुझसे कहा है कि वह मुझे मारेगा। मारेगा या नहीं, यह नवम्बर में पता चलेगा। ●



अशोक मिश्रा

अशोक कुमार, सातवीं, करवाड़िया, देवास, म.प्र.। चकमक, जुलाई 1990 में प्रकाशित। अशोक मिश्रा, दसवीं, देवास, म.प्र.।

अदल-बदल

❑ **कमलेश खैरिया**

गर्मियों की छुट्टी में मैं मामा की लड़की की शादी में खण्डवा गया था। मैं वहाँ थोड़ी देर घूमा, फिर बारात आ गई। हम सब दूल्हे को देखने दौड़ पड़े। फिर थोड़ी देर बाद नाश्ता करवाया गया। फिर शरबत पिलाया।

शाम को खाना खाया गया। खाने में बहुत-सी स्वादिष्ट चीज़ें बनी थीं। हमने खाना, डटकर खाया और छत पर मस्ती करने लगे।

फिर लगन (भाँवर) का समय आया। लगन में दूल्हा-दुल्हन के फेरे पड़े। दूल्हा अच्छा था। उसने कोई ज़िद नहीं की।

फिर हम सो गए। मैं जब सबेरे उठा तो पता चला मेरी चप्पल नहीं है। मैंने इधर-उधर ढूँढी पर नहीं मिली। मैं नंगे पाँव वापस आ गया। मेरे साथियों ने देखा तो एक बोला, "अरे यार तू भी किसी की चप्पल मार दे।"

मैंने कहा, "नहीं, मैं नई ख़रीद लूँगा।"

तो दूसरा बोला, "अबे रख ले पाँव जलेंगे।"

साथियों के अनुरोध पर मैंने चप्पल पहन ली। पर मैं बहुत घबराया हुआ था। मैंने आज तक ऐसा नहीं किया था।

अब दूल्हा-दुल्हन को मन्दिर ले गए। हम भी वहाँ गए। जब मन्दिर से उतरकर चबूतरे पर बैठे तो मैंने मन्दिर के बाहर अपनी चप्पल देखी। मैंने जो चप्पल पहनी थी वह उतार दी और अपनी पहन ली।

इतने में ही किसी ने मेरे कंधे पर हाथ रखा। मैं डर गया। जब मैंने देखा तो वह मेरा दोस्त था।

उसने कहा, "यार मेरी चप्पल गुम हो गई थी, वह यहाँ मिली। और तेरी चप्पल के पास रखी थी।"

मैंने कहा, "तेरी चप्पल मैंने पहनी थी।"

हम दोनों को अपनी-अपनी चप्पल मिल गई। ●



महेन्द्रसिंह चौहान

कमलेश खैरिया, दसवीं, भोपाल, म.प्र.। चकमक जनवरी, 1989 में प्रकाशित।
महेन्द्रसिंह चौहान, पाँचवीं।

गाय ने खाया काग़ज़

❑ सौमित्र चटर्जी

पिछली छुट्टियों में मैं अपने मामा के गाँव गया था। मेरे मामा के घर के पिछवाड़े में एक कमरा है, जिसमें एक बड़ी सी खिड़की है। उस खिड़की से दूर-दूर तक फैले खेत और बागान हैं जो स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं।

एक दिन मैं उस खिड़की के किनारे बैठकर पेंटिंग कर रहा था। मैं उन खेतों-बागानों के दृश्यों को अपनी पेंटिंग-पुस्तिका में उतार रहा था। सहसा मैंने देखा कि एक गाय उस खेत में चर रही थी। तभी मेरे दिमाग़ में एक विचार कौंधा। मैंने काग़ज़ की छोटी-छोटी पत्तियाँ बनाईं। उन्हें काट कर स्केच पेन से रंग डाला। इस तरह की ढेर सारी पत्तियों को लेकर मैं गाय के पास पहुँचा। गाय अभी घास चर रही थी। जब गाय की नज़र काग़ज़ की पत्तियों पर पड़ी तो गाय उन सारी पत्तियों को खा गई।

मैं यह सोचकर बहुत खुश हुआ कि मैंने गाय को मूर्ख बनाया। जब मैंने यह बात अपने दोस्तों को बताई तो वे हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए। मैंने हँसने का कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि गाय काग़ज़ भी खाती है। ●

सौमित्र चटर्जी, आठवीं, पटना, बिहार। हेमलता कुंजुर, सातवीं। कहानी तथा चित्र चकमक मार्च, 1991 में प्रकाशित।



हेमलता कुंजुर

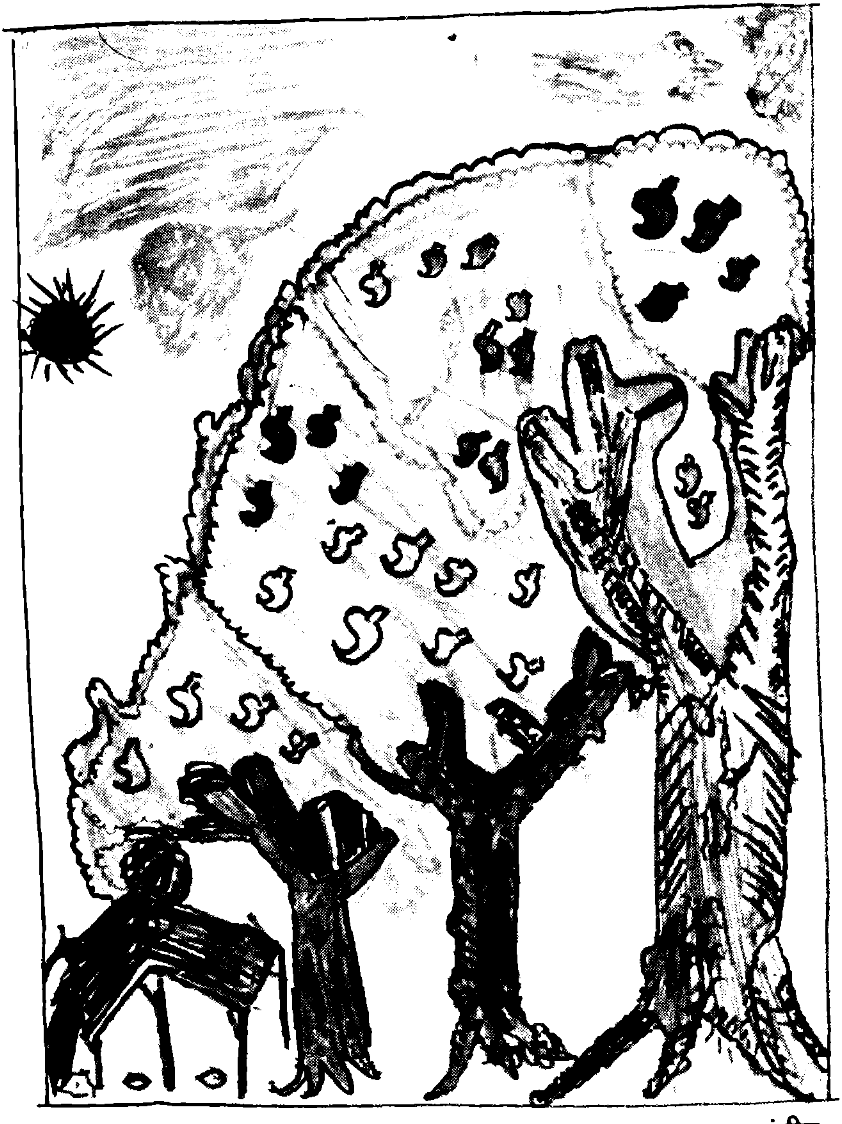
आम की खोज

❑ गोपाल तिवारी

एक समय की बात है। हम लोग आम की खोज करने के लिए बगिया में गए। समय रात के दो बज चुके थे। बगिया में जाकर हम लोगों को कम से कम अस्सी आम मिले। तब हम लोग अपने-अपने घर आए। सुबह माँ ने हमसे पूछा कि इतने सारे पके हुए आम कहाँ से आए? हमने कहा कि बगिया में से हम आम लाए हैं। तब माँ डर गई और कहने लगी कि इतनी रात को तुम बगिया में गए तुमको डर नहीं लगा। तब हमने माँ से कहा कि मैं अकेला नहीं गया था, मेरे साथ रमेश, विनोद, प्रमोद, कन्हैया भी गए थे। माँ ने सबको बुलाया और कहने लगी कि रात में तुम सब आम खोजने क्यों गए बगिया में, अब मत जाना। इसलिए कि वहाँ बहुत बड़ा साँप रहता है। तुम सब को पकड़ लेगा।

यह सब बात बताकर माँ भोजन बनाने के लिए चली गई। तब हम सब बच्चे आपस में बात कर रहे थे कि अबकी बार बगिया में फिर चलें और वहाँ साँप होगा तो हम सब उसे मार देंगे। हम लोग यह सब बातें कर ही रहे थे कि उसी समय यह सब बातें सुनते हुए पिता जी आ गए और हम लोगों से कहने लगे कि बगिया में मत जाना।

हम लोग उसी रात को हाथ में टार्च और लाठी लेकर बगिया की ओर चल पड़े। वहाँ जाने पर भी साँप का नामो-निशान तक नहीं मिला। तब कन्हैया ने कहा कि गोपाल भैया की माँ हम लोगों को डरा रहीं थीं कि हम लोग बगिया में



सत्यनारायण गंजीर

न जाएँ। लेकिन ऐसा थोड़े ही होगा कि हम लोग आम चुनना छोड़ देंगे? वहाँ जाकर दनादन आम चुनना शुरू किया। उस दिन भी अस्सी आम मिले। जब हम सबों के झोले भर गए तो हम सड़क की ओर से अपने घर की ओर आ रहे थे कि एकाएक बहुत-सी रोशनी हम लोग की आँख पर आई। हम लोग डरकर भागने लगे।

डकैतों का डर था। इसलिए कि हमारे गाँव में दस रोज़ पहले एक राय जी के घर में डकैती हुई थी। जब हम डर के मारे भाग रहे थे तो वो सब पीछा करने लगे। भागते-भागते अपने घर आए। हम सब इतनी ज़ोर से भागे कि आम का थैला कहाँ गिर गया कुछ पता नहीं चला।

हम लोग गाँव में आकर कहने लगे कि डकैत हमारे गाँव के आस-पास आ गए हैं। हमारे गाँव के लोग ईंटा-पत्थर लेकर तैयार थे कि डकैत यदि आ जाएँगे तो मुकाबला डटकर होगा। वे लोग हमारे घर के आस-पास आ गए और हम सब को खोजने लगे। सब शैतान लड़के कहाँ गए?

थोड़ी देर के बाद पता चला कि वो चोर नहीं पुलिस है। तब हम लोग उनके पास गए तो वे कहने लगे कि इतनी रात को तुम बगिया में क्यों गए थे? हम लोगों ने कहा कि आम खोजने के लिए बगिया में गए थे। वो कहने लगे आधी रात को बगिया में मत जाना, नहीं तो अच्छा नहीं होगा।

दरोगा जी कहने लगे कि यह सब लड़के इतने शैतान हैं कि हम लोग को हैरान कर दिया। दरोगा जी जब गिर पड़े थे और उनके पेट में चोट आ गई थी। तब उन्होंने कहा कि गोली चलाओ, लेकिन अच्छा हुआ कि पुलिस ने गोली नहीं चलाई।

तब दरोगा जी ने कहा कि तुमने तो हैरान कर दिया लेकिन ऐसा अब मत करना।

दरोगा जी ने कहा कि तुमने तो ख़ूब दौड़ाया अब ज़रा पानी पिलाओ। तब हमने दरोगा जी को चार ग्लास पानी पिलाया। फिर दरोगा गए दक्षिण दिशा में गश्त करने और हम अपने-अपने घर गए। तब हमारे गाँव के लोग कहने लगे कि यह सब लड़के इतने बदमाश हैं कि दरोगा जी को भी परेशान कर दिया। तब हम लोग अपने घर जाकर सो गए। ●

गोपाल तिवारी, पिरारी, बिहार। चकमक फ़रवरी, 1991 में प्रकाशित।
सत्यनारायण गंज़ीर, छठवीं, किरगी, राजनांदगाँव, म.प्र.।

न भूत लगा, न प्रेत

❑ नाहरसिंह पंथाल

एक बार की बात है। किसी कारण से मैंने ज़्यादा बोलना छोड़ दिया था। मेरी दीदी ने कहा कि तुझे कुछ हो गया है। मेरी दीदी मुझे लेकर एक ओझा के पास गई। ओझा ने अपनी मंत्रों की पोथी खोली और उसमें सवा पाँच रुपया रखने के लिए कहा। मेरी दीदी ने पोथी पर रुपए रख दिए। उसने कुछ मंत्र पढ़े और मुझे दो लड्डू देते हुए बोले कि जाओ इन्हें बिना किसी से बोले किसी एकांत जगह पर फेंक दो। यदि इनको किसी ने खा लिया तो उस पर प्रेत अपना प्रभाव डालेगा। मैंने एकांत में जाकर सोचा कि देखें भूत मुझ पर कैसे प्रभाव डालता है। मैंने वे लड्डू खा लिए और दोस्तों से गपशप लगाकर घर आ गया। लेकिन मुझ पर आज तक कोई प्रभाव नहीं पड़ा। ●

नाहरसिंह पंथाल, आठवीं, उखलचाना, रोहतक, हरियाणा। चकमक मई, 1991 में प्रकाशित। मंजुलता ठाकुर, छठवीं, जबलपुर, म.प्र.।



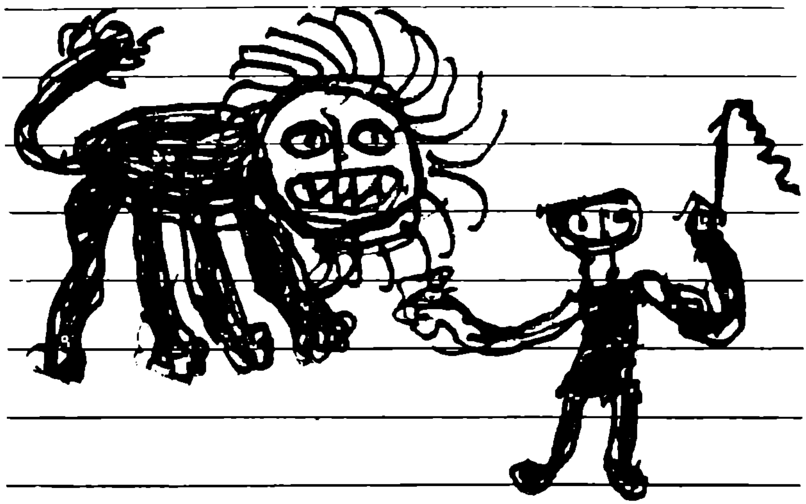
मंजुलता ठाकुर

शेर आया, चाय पीने

❑ विष्णु प्रसाद मालवीय

एक बार मैं स्टोव पर चाय बना रहा था। मेरे पीछे एक शेर आया तो उसने कहा, "भाई मैं भी चाय पीऊँगा, ज़रा ज़्यादा बनाना।"

मैंने कहा कि, "मैं चाय नहीं पिलाऊँगा क्योंकि तुम मनुष्य खाते हो।" ●



प्रकाश चन्द्र

विष्णु प्रसाद मालवीय, तेरह वर्ष, लसूड़िया राठौर, मन्दसौर, म.प्र.। प्रकाशचन्द्र, पिपल्या स्टेशन, मन्दसौर, म.प्र.। कहानी तथा चित्र चकमक जुलाई, 1990 में प्रकाशित।

बैठा आस लगाए जल्दी साल पूरा हो जाए

❑ दीपक मेहता

मेरे सब दोस्त सायकिल चलाते थे। तो मेरा भी मन होता था कि मैं भी सायकिल चलाऊँ। एक दिन मैंने मम्मी से कहा, "मम्मी मुझे भी सायकिल दिलाओ।"

मम्मी ने कहा, "तू पहले सायकिल चलाना तो सीख ले।"

मैंने कहा, "किससे सायकिल चलाना सीखूँ और कहाँ चलाऊँ? कोई भी तो नहीं सिखाता।"

मम्मी बोली, "तू अपने पापा से बात करना।"

मैंने कहा, "ठीक है, मैं अभी खेलने जा रहा हूँ।" शाम को मैं घर आया तो पापा आ गए थे।

मैंने कहा, "पापा हमें सायकिल दिलाइए।"

पापा ने कहा, "तू अभी छोटा है। तुझसे सायकिल नहीं चलेगी।"

मैंने कहा, "मेरे सभी दोस्त भी तो छोटे हैं। फिर वो कैसे सीख गए?"

पापा को हार माननी पड़ी। कहा, "अगले साल दिला दूँगा जब तू चौथी में चला जाएगा।" मैंने पापा की बात मान ली।

मुझे लगता कब जल्दी-से चौथी में आऊँ और सायकिल आए। धीरे-धीरे साल ख़त्म हुआ और मैं चौथी में चला गया। मैंने पापा से कहा, "मुझे सायकिल दिलाओ।"



लाखन सिंह

पापा ने कहा, "तू पहले किसी भी दोस्त की सायकिल चला और सीख ले।"

मैंने कहा, "पापा आपने तो मुझसे कहा था कि तू जब चौथी क्लास में चला जाएगा तो मैं सायकिल दिला दूँगा।"

"नहीं, अभी तू एक साल और रुक जा। तू छोटा है।"

मैंने कहा, "मैं पाँचवीं में जाऊँगा तो आपको ज़रूर लानी पड़ेगी।"

पापा ने कहा, "ठीक है, पक्का सायकिल दिलाऊँगा।" मैं पाँचवीं में चला गया। मेरे पाँचवीं में जाने के बाद भी दो-तीन महीने बीत गए। मैंने बहुत ज़िद पकड़ ली और पापा को सायकिल लानी पड़ी। अब सायकिल तो आ गई मगर सिखाने वाला कोई नहीं था।

मैं बहुत दिन तक अपने मन से धीरे-धीरे चलाता और थोड़ी दूर जाकर रुक जाता। मुझे डर था कि कहीं गिर न जाऊँ। मैंने मम्मी को बताया। मम्मी ने कहा, "पुलिस ग्राउंड में जाकर चला, वहाँ गिरेगा तो लगेगी भी नहीं।"

मैंने कहा, "ठीक है।" मैं पुलिस ग्राउंड में सायकिल लेकर गया। वहाँ मैंने सायकिल तो चलाई मगर ब्रेक नहीं लगा। मैं गड्ढे में गिर गया। मेरे पाँव में लग गई। फिर धीरे-धीरे मेरे को सायकिल चलाना आ गई। ●

दीपक मेहता, पाँचवीं, देवास, म.प्र.। चकमक दिसम्बर, 1991 में प्रकाशित।
लाखन सिंह, तेरह वर्ष, लसूड़िया राठौर, मन्दसौर, म.प्र.। चकमक अप्रैल, 1991 में प्रकाशित।

मन भर चीनी खाई

❑ अनीता कुमारी

चीनी खाने में बहुत अच्छी लगती है। इसलिए मैं बहुत चीनी खाती थी। जब कभी भी माँ रसोईघर से इधर-उधर होती कि मैं झट से चीनी खा लेती।

माँ जब कभी भी मुझे चीनी खाते देखती, बहुत समझाती थी कि इतनी चीनी नहीं खानी चाहिए। अधिक चीनी खाने से पेट में कीड़े हो जाते हैं।

मैं माँ की बात नहीं मानती थी। छुप-छुपकर चीनी खाने में बहुत मज़ा भी आता था।

एक दिन किसी काम से माँ और पिताजी को बाहर जाना पड़ा। माँ जाते समय मुझे कह गई कि, देखो मैं दो घण्टे बाद आऊँगी। तुम बाहर कहीं नहीं जाना और दरवाज़ा बन्द करके घर में रहना।

उनके जाते ही मैंने बाहर का दरवाज़ा बन्द कर लिया। मैं घर में अकेले हो गई। मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूँ! अचानक मुझे चीनी की याद आ गई। उस दिन मैंने इतनी चीनी खाई कि मेरा मन भर गया। ●

अनीता कुमारी, आठवीं, सालीमपुर अहरा, पटना, बिहार। चकमक सितम्बर, 1991 में प्रकाशित। रईस खान, पीथमपुर, धार, म.प्र.

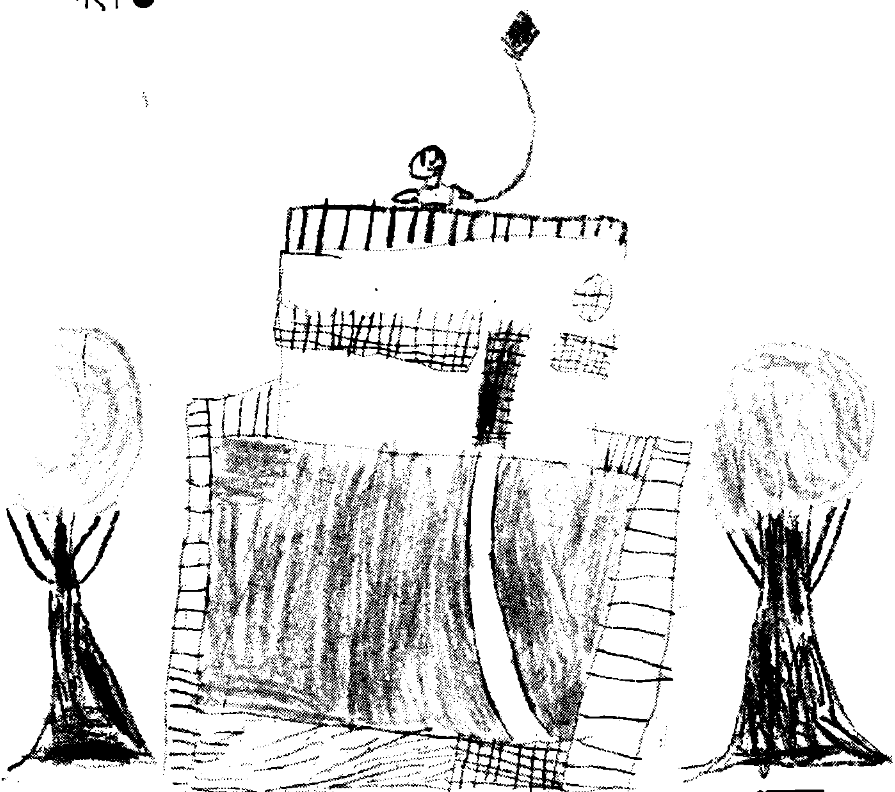


रईस खान

पतंग की करामात

❑ निकोलस बर्न

एक बार मैं पतंग उड़ा रहा था। अचानक मेरी पतंग बहुत-बहुत दूर चढ़ गई। मेरी पतंग चाँद में अटक गई थी, अब क्या! तब आसमान में दो आदमी चढ़े थे। और वे नीचे नहीं आ पा रहे थे। भूल से वे दोनों मेरी पतंग पर बैठ गए। मैंने एक झटका मारा, तो वे दोनों मेरी पतंग के साथ नीचे आ गए। ●



भाष्कर

निकोलस बर्न, पाँचवीं, हरदा, म.प्र.। चकमक सितम्बर, 1989 में प्रकाशित। भाष्कर, चार वर्ष, जयपुर, राजस्थान

फूल

❑ सत्य प्रकाश सिंह



दीपाली सोनी

एक बार मीनू फूल लेने जा रही थी। उसके घर में पूजा थी। तभी रास्ते में पेड़ पर चिड़ियों का चहचहाना सुनकर रुक गई और उस पेड़ के नीचे बैठ गई। उसे वहाँ बैठना अच्छा लग रहा था।

वह बहुत देर तक वहाँ बैठी रही। तभी उसे फूल की बात याद आई। वह जल्दी-जल्दी फूल तोड़कर घर पहुँची। घर पहुँचने पर उसने देखा कि पूजा समाप्त हो चुकी है। ●

सत्यप्रकाश सिंह, दूसरी, आरंग, रायपुर, म.प्र.। चकमक जुलाई, 1991 में प्रकाशित। दीपाली सोनी, सातवीं, हिरणखेड़ा, होशंगाबाद, म.प्र.।

धमबम, छमबम और हम

❑ **राजेन्द्र कुमार**

एक समय की बात है। हम तीन मित्र रोज़ सबेरे व्यायाम करने जाते थे। हम तीनों मित्रों के नाम थे। धमबम, छमबम और हम।

एक दिन हम तीनों ने सोचा कि आज अपन लोग शाम को बगीचे की तरफ घूमने जाएँगे। फिर हम तीनों शाम को बगीचे की तरफ घूमने के लिए चल पड़े। वहाँ पर बहुत बडे-बड़े पेड़ थे। जैसे आम, पीपल, इमली, सगौना, कुहाँ, बबूल, आदि।

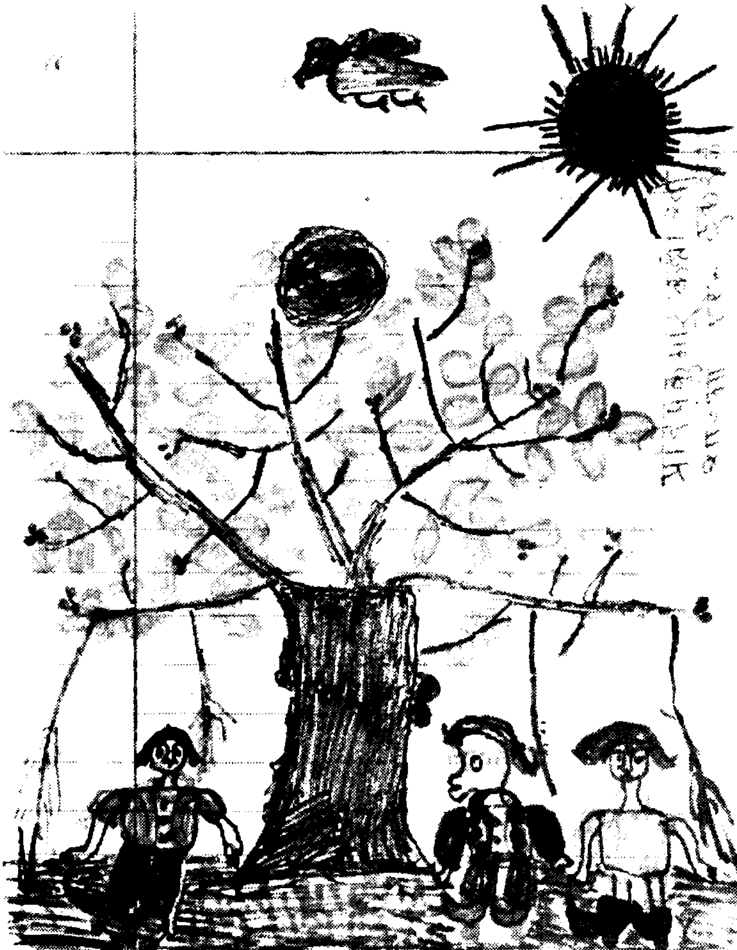
धमबम बोला, "मित्र हमको तो बहुत डर लगता है। हम तो नईं जाएँ।"

छमबम बोला, "अरे डरपोक तू गजब करत है, अरे, भय को भूत, लहर को जाड़ो; जब देखो जब आगे ठाड़ो।"

हम बोले, "हाँ सच है ये बात।"

फिर ऐसा सोचकर तीनों चल दिए, बगीचे के भीतर की ओर। तो उस बगीचे में गड़बड़ ठाकुर लुका था। उस ठाकुर ने हमको डरवाने कि कोशिश की। वह हाऊ-हाऊ कहने लगा। धमबम बहुत डरता था। उस आवाज़ को सुनकर वह डर गया। हमने सोचा कि सचमुच भूत है। छमबम ने कहा, "अरे मित्र घबराओ मत हम निपट लेंगे।"

फिर गड़बड़ ठाकुर हमरे पास आ गया। फिर हमने उससे कहा, "क्यों रे हमको क्यों डराता है।"



प्रदीप कुमार

और फिर हम तीनों उससे लड़ पड़े। हमने उसको ख़ूब मारा। फिर हम घर आ गए। ●

राजेन्द्र कुमार, आठवीं, सुरेलारंधीर, पिपरिया, होशंगाबाद, म.प्र.। चकमक मार्च, 1990 में प्रकाशित। प्रदीप कुमार, आठवीं, टुकराल, उज्जैन, म.प्र.।

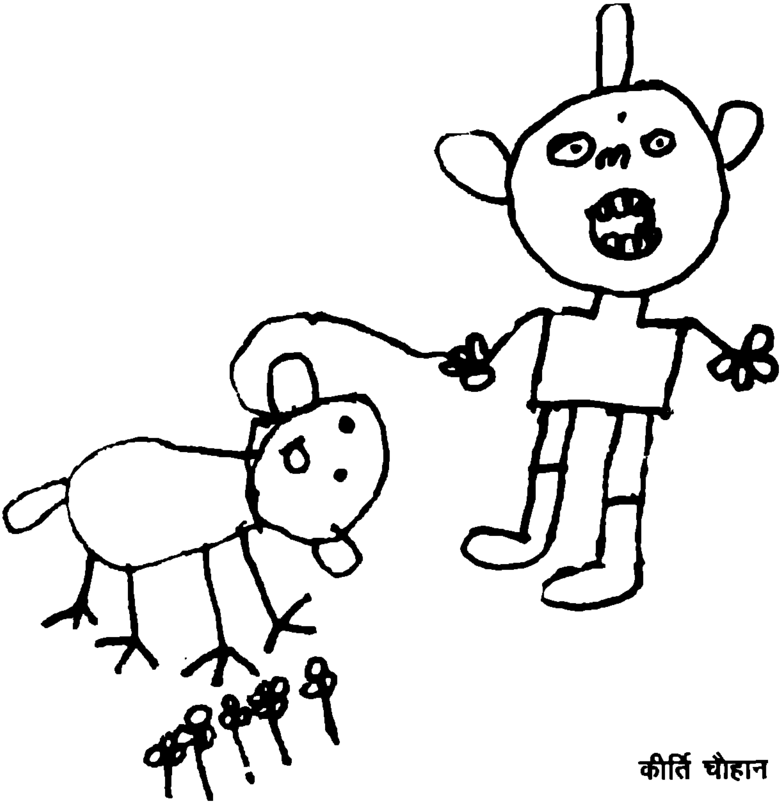
पागल कुत्ते से सामना

❑ पुष्पराज नारायण

यह कहावत शत-प्रतिशत ठीक है कि अगर आदमी शेर से न डरे तो शेर पालतू कुत्ता। बात ऐसी है कि गर्मी के दिन थे। आम पक पक के गिर रहे थे। मैं आम खाने बगीचा गया था। मैं एक आम के नीचे गया। वहीं एक पागल कुत्ता खड़ा था और मैं नहीं जानता था कि ये पागल कुत्ता है। बस गाँव में ये हल्ला था कि कहीं से एक पागल कुत्ता आ गया है, जो रोज़-रोज़ कोई न कोई दुर्घटना करता रहता है। मैं निश्‍िचत होकर आम खाने लगा।

मेरी नज़र उस कुत्ते पर पड़ी। मैं उसे ध्यान से देखने लगा। उस कुत्ते में मुझे पागल कुत्ते के सभी लक्षण दिखने लगे। जैसे-जैसे उसके मुँह से लार अधिक मात्रा में निकल रही थी और वह अपने गिरी हुई लार को चाट रहा था। मैं समझ रहा था कि हो न हो यही पागल कुत्ता है।

तभी दूर से किसी लड़के की आवाज़ आई, "भागो पुष्पराज, वो पागल कुत्ता है।" यही सोचकर मैंने भागना बन्द कर दिया और खड़ा हो गया। कुत्ता मेरे पास आ गया। कुत्ता जब मेरी तरफ झपटा तो मैंने कुत्ते का गला कसकर पकड़ लिया और उसे घुमाने लगा। एक-दो राउंड घुमाकर मैंने कुत्ते को फेंक दिया। कुत्ता ज़मीन पर गिरते ही दुम दबाकर भाग खड़ा हुआ। उधर वो भागा और इधर मैं घर की तरफ दौड़ा। फिर मैंने घर आकर ही दम लिया। ●



कीर्ति चौहान

पुष्पराज नारायण, शहडोल, म.प्र.। कीर्ति चौहान, चार वर्ष, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.। कहानी तथा चित्र चकमक अगस्त, 1989 में प्रकाशित।



प्रेमचन्द

शेर से दोस्ती

❑ रीतू सिन्हा

मैं और मेरी सहेली बीटू एक दिन जंगल में घूमने गईं। तभी अचानक हम दोनों ने एक शेर को देखा। शेर को देखकर हम दोनों डर गए और भागने लगे। शेर हमारा पीछा करने लगा तो हम दोनों एक पेड़ पर चढ़ गईं। तभी शेर वहाँ आ पहुँचा।

शेर गुर्रा रहा था। मैं हिम्मत कर बोली, 'शेर दादा, तू हम दोनों को क्यों परेशान करता है? तू हमसे दोस्ती कर ले।'

शेर ने कहा, 'ठीक है, बच्चे मुझे भी प्यारे लगते हैं।'

तब हम दोनों ने शेर से दोस्ती कर ली। ●

रीतू सिन्हा, आठ वर्ष, बगैन, भोजपुर, बिहार। चकमक अगस्त, 1991 में प्रकाशित। प्रेमचन्द, आठवीं, चिकलाना, रतलाम, म.प्र.। चकमक फ़रवरी, 1990 में प्रकाशित।

एकलव्य : एक परिचय

एकलव्य, जो एक स्वैच्छिक संस्था है, पिछले कई वर्षों से शिक्षा एवं जनविज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत है। एकलव्य की गतिविधियाँ स्कूल व स्कूल के बाहर दोनों क्षेत्रों में हैं। स्कूली शिक्षा में नए प्रयोगों का काम माध्यमिक कक्षाओं में होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से शुरू हुआ था और उनका विस्तार सामाजिक अध्ययन विषयों के साथ-साथ प्राथमिक कक्षाओं में भी हो गया है।

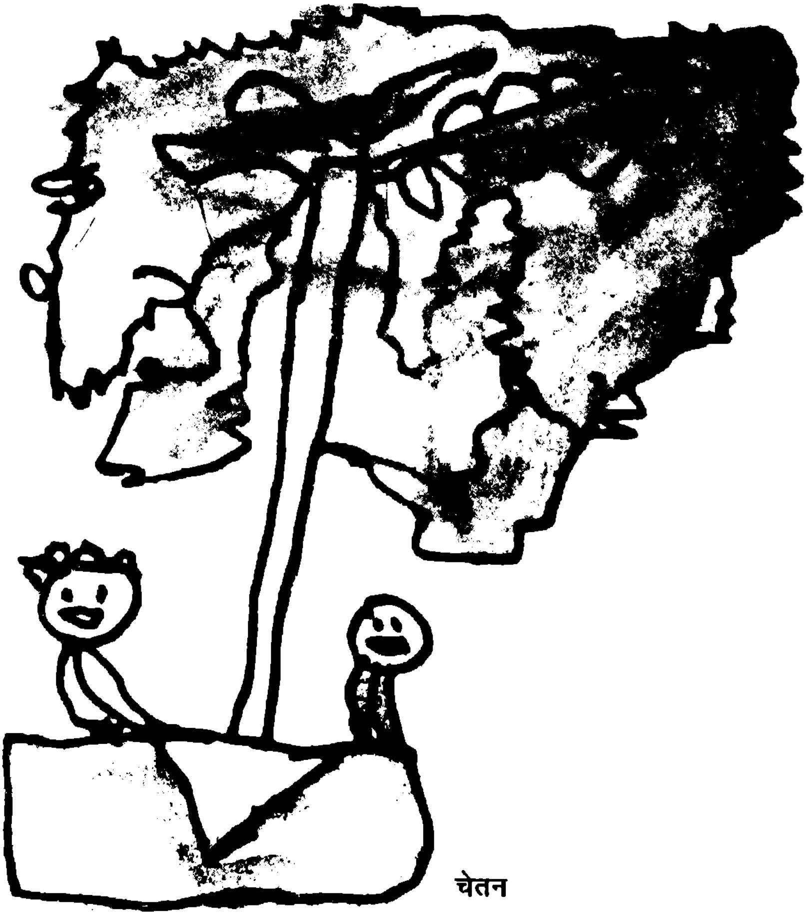
इस काम का मुख्य उद्देश्य है एक ऐसी शिक्षा जो बच्चे व उसके पर्यावरण से जुड़ी हो, जो खेल, गतिविधि व सृजनात्मक पहलुओं पर आधारित हो। इस काम के दौरान हमने पाया कि स्कूली प्रयास तभी सार्थक हो सकते हैं जब बच्चों को घर में या स्कूली समय से बाहर भी रचनात्मक गतिविधियों के साधन उपलब्ध हों, जिनमें किताबें तथा पत्रिकाएँ एक अहम हिस्सा हैं।

इसी मंशा से एकलव्य ने पिछले वर्षों में ग्रामीण इलाकों में बच्चों के लिए पुस्तकालय खोले हैं, चकमक क्लब बनाए हैं। स्थानीय स्तर पर बच्चों द्वारा प्रकाशित की जाने वाली बाल पत्रिकाओं बालकलम, उड़ान आदि को प्रोत्साहित किया है।

जुलाई, 85 से नियमित रूप से प्रकाशित चकमक पत्रिका भी इसी काम का एक हिस्सा है।

पिछले कुछ वर्षों में एकलव्य ने अपने काम का विस्तार प्रकाशन के क्षेत्र में भी किया है। *चकमक* के अतिरिक्त *स्रोत* (विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी फीचर) तथा *सन्दर्भ* (शैक्षिक पत्रिका) एकलव्य के नियमित प्रकाशन हैं। शिक्षा, जनविज्ञान, बच्चों के लिए सृजनात्मक गतिविधियों के अलावा विकास के व्यापक मुद्दों से जुड़ी किताबें, पुस्तिकाएँ, सामग्री आदि भी एकलव्य ने विकसित एवं प्रकाशित की है।

वर्तमान में एकलव्य म.प्र. में भोपाल के अतिरिक्त होशंगाबाद, हरदा, पिपरिया, देवास व उज्जैन में स्थित केन्द्रों तथा शाहपुर (बैतूल) व परासिया (छिंदवाड़ा) में स्थित उपकेन्द्रों के माध्यम से कार्यरत है।



चेतन

चेतन, पहली, कन्नौद, देवास, म.प्र.। चकमक दिसम्बर, 1990 में प्रकाशित।



हार्दिक